# इकाई 2 'घृणा तुम्हें मार सकती हैं' और 'सच यही है' tkfr 0;oLFkk dk cnyu dk lidYi

bdkbZ dh :ijs[kk


2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 रचनाकार : व्यक्तित्व एवं रचनाबोध, ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय

2.3 नए सौन्दर्यशास्त्र का प्रश्न और दलित साहित्य

2.4 अछूत की शिकायत का मर्म और महत्व

2.4.1 हीरा डोम की विरासत और हिन्दी की दलित कविता

2.4.2 वर्ग-वर्ण का प्रश्न और हिन्दी की दलित कविता

2.5 कविताओं का पाठावलोकन

2.5.1 'घृणा तुम्हें मार सकती है* का पाठावलोकन

2.5.2 'सच यही है* का पाठावलोकन

2.6 संवेदनात्मक उद्देश्य

2.7 संरचनात्मक सौन्दर्य

2.8 सारांश


## 2.0 उद्देश्य

यह 'हिन्दी दलित साहित्य का विकास* पाठ्यक्रम के पहले खण्ड 'हिन्दी की दलित कविता* की दूसरी इकाई है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- हिन्दी की दलित कविता के स्वर से परिचित हो सकेंगे;
- नए सौन्दर्य शास्त्र की आवश्यकता को महसूस कर सकेंगे;
- दलित कविता की संवेदना और दृ-टि की पहचान कर सकेंगे;
- वर्ग-वर्ण की बहस से अवगत हो सकेंगे;
- हिन्दी की दलित कविता के दो प्रमुख कवियों की एक-एक कविता के पाठावलोकन की प्रक्रिया से गुजरते हुए दलित कविता की विशिष्टता को समझ सकेंगे;
- इन कविताओं के संरचनात्मक सौन्दर्य का विश्ले-ण कर सकेंगे;
- इनके माध्यम से मनु-यता का मर्म जान सकेंगे; और
- सबसे महत्वपूर्ण यह कि इन कविताओं में निहित संवेदनाओं को अपनी संवेदना से जोड़कर यह देख सकेंगे कि भारतीय समाज की उन्नति समाज को विभिन्न वर्णों और जातियों-सम्प्रदायों में बाँटने से नहीं बल्कि सभी प्रकार के भेद मिटाने से होगी।

## 2.1 प्रस्तावना

दलित कविता के इस खंड 1 में आपको ओमप्रकाश वाल्मीकि और मोहनदास नैमिशराय की एक-एक कविता का अध्ययन करना है। हिंदी दलित कविता की मूल प्रेरणा दलित मुक्ति आंदोलन और डॉ. भीमराव आंबेडकर का मुक्तिधर्मी दर्शन है। दलित साहित्यकार डॉ. आंबेडकर द्वारा निर्दि-ट राह पर चलकर एक वर्णमुक्त और भयमुक्त समाज की निर्मिति में अपना योगदान दे रहे हैं। अध्ययन के लिए चयनित कवि ओमप्रकाश वाल्मीकि और मोहनदास नैमिशराय हिन्दी दलित साहित्य के महत्वपूर्ण रचनाकार हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने गद्य और कविता दोनों में समान ऊर्जा और प्रतिभा के साथ लेखन किया है और लगातार कर रहे हैं जबकि मोहनदास नैमिशराय ने बाद के दिनों में गद्य ही अधिक लिखा है। उनकी कविताओं का एक ही संग्रह ^आग और आंदोलन* नाम से प्रकाशित है। अध्ययन के लिए निर्धारित उनकी कविता ^सच यही है* का चयन इसी संग्रह से किया गया है जबकि ओमप्रकाश वाल्मीकि की चयनित कविता उनके संग्रह ^बस्स! बहुत हो चुका* से ली गई है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के कई संग्रह प्रकाशित हैं।

हिन्दी में दलित कविता विधा सबसे सशक्त रूप में अपनी उपस्थिति को दर्ज कर चुकी हैं। पिछले पन्द्रह व-र्ों में दलित कविता के कई ऐसे संग्रह आए हैं, जिन्होंने पाठकों और आलोचकों को अपनी ओर आकृ-ट किया है। इन कविताओं ने परंपरागत सौन्दर्यशास्त्र को चुनौती दी है और अपने लिए नए सौन्दर्यशास्त्र की आवश्यकता भी जताई है। कहना न होगा कि अध्ययन के लिए निर्धारित कविताएं भी ऐसी ही कविताओं में से हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता ^घृणा तुम्हें मार सकती है* जहाँ दलित समाज के प्रति सदियों से अपनाए गए घृणित रवैये को बेपर्दा करती है, वहीं नैमिशराय की कविता साम्प्रदायिकता पर चोट करती है। यहाँ यह देखना महत्वपूर्ण होगा कि दलित कवि जातिगत और धार्मिक भेदभाव एवं कटुता को किस तरह देखते और दिखाते हैं। इस इकाई में हमने यह प्रयास किया है कि निर्धारित कविताओं के माध्यम से दलित कविता के स्वर को व्याख्यायित किया जाए। यह देखा जाए कि ये कविताएं किस प्रकार की समीक्षा प्रस्तुत करती हैं और दलित कविता की कलात्मकता पर जो टिप्पणियाँ की जाती हैं, उनका औचित्य और सत्य क्या है? क्या सचमुच दलित कविताओं में कलात्मकता का अभाव है? इसके साथ ही यह बताना भी आवश्यक है कि इस इकाई में हमने कविताओं की संवेदनात्मक पड़ताल पर अधिक बल दिया है। दलित कविता का तात्कालिक और दूरकालिक मंतव्य भी इसी में निहित है। आइए, इन कविताओं के पाठावलोकन से पूर्व नए सौन्दर्य शास्त्र की आवश्यकता, हीरा डोम की कविता (जिसने पहली बार दलित जीवन की त्रासदी को शब्दबद्ध करने का प्रयास किया है) और वर्ग-वर्ण की बहस पर विचार करें। इस विचार-विमर्श का लाभ ओमप्रकाश वाल्मीकि और मोहनदास नैमिशराय की कविता के पाठावलोकन में अवश्य मिलेगा।

## 2.2 रचनाकार : व्यक्तित्व एवं रचनाबोध, ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय

### कवि परिचय, ओमप्रकाश वाल्मीकि

आज के दलित आंदोलन और साहित्य के वैचारिक पृ-ठभूमि के केन्द्र में शो-णवादी जाति व्यवस्था का विरोध और उससे मुक्ति है। इसमें मददगार दर्शनों से दलित साहित्य प्रेरणा लेता है किन्तु डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर की विचारधारा इसका आधार है। दलित साहित्य

आंदोलन सर्वप्रथम महारा-ट्र में शुरू हुआ। मराठी भा-ा में अनेक रचनाएँ लिखी गईं। जिस तरह महारा-ट्र में दलित मुक्ति आंदोलन की शुरुआत महारा-ट्र में डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के जुझारू नेतृत्व में हुई, ठीक उसी तरह मराठी भा-ा में ही दलित साहित्य आंदोलन चला। परिणामस्वरूप महारा-ट्र में सामाजिक और साहित्यिक दोनों स्तरों पर परिवर्तन की तेज लहर देखी गई। अनेक प्रांतों और प्रादेशिक भा-ाओं में दलित आंदोलन को प्रेरित करने का काम इसी आंदोलन ने किया। हिन्दी प्रदेश में दलित चेतना और दलित साहित्य भी मराठी दलित साहित्य आंदोलन संघर्-ा से प्रभावित होकर पनपा।

मराठी तथा अन्य भा-ाओं की तुलना में हिन्दी दलित साहित्य की शुरुआत बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में आत्मकथाओं से हुई। विभिन्न दलित लेखकों ने अपने जीवनानुभवों को यथार्थ रूप में अभिव्यक्त किया। अतः आत्मकथा-विधा से दलित साहित्य का आरम्भ हुआ। 'जूठन', 'अपने अपने पिंजरे' को लेकर क्रमशः ओमप्रकाश वाल्मीकि और मोहनदास नैमिशराय सामने आए। वर्ण व्यवस्था और जातिवाद की बेड़ियों में जकड़े दलित समुदाय की इन छटपटाहट और पीड़ा की अभिव्यक्ति के दस्तावेज आत्मकथाओं में हुई।

दलित साहित्य हिन्दी साहित्य की प्रमुख धारा है जिसने देश की बहुसंख्यक शोनित-उत्पीड़ित जनता के दुख-दर्द को यथार्थपरक ढंग से सामने रखा है। लेकिन उसे हमेशा हाशिये पर रखा गया किसी भी रचना की यथार्थता की कसौटी उसमें अभिव्यक्त लेखक के मत से तय होती है। और किसी भी रचनाकार का आधार ही उसकी चेतना और प्रतिबद्धता का नियामक है। इसीलिए स्वानुभूत यथार्थ और उससे उपजी चेतना ज्यादा महत्वपूर्ण है। यह अनुभूति की सृजनात्मक अभिव्यक्ति है इसलिए प्रामाणिक है।

हिन्दू समाज का बहुसंख्यक तबका जिसे शूद्र और दलित कहा जाता है, सदियों से शोनित और उत्पीड़ित रहा है। इनकी अपनी यातना, दुःख और त्रासदी को सूक्ष्मतम रूप से रखने वाले रचनाकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि का नाम सर्वोपरि है। इनका जन्म 30 जून 1950 को ग्राम बरला, जिला मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश में हुआ। बेहद गरीबी में पल बढ़कर ओमप्रकाश वाल्मीकि ने हिन्दी में स्नातकोत्तर पदवीं प्राप्त की है। तत्पश्चात्, वे भारत सरकार के रक्षा संस्थान में अधिकारी नियुक्त हुए।

**साहित्यिक योगदान**

ओमप्रकाश वाल्मीकि बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। जिन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं में लिखा है। कविता, कहानी, आत्मकथा और आलोचना आदि विधाओं में इनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। 'सदियों का संताप', बस्स! बहुत हो चुका' और 'अब और नहीं' उनके तीने बहुचर्चित काव्य-संग्रह है। उनकी कविताएँ चर्चित और बहुप्रशंसित रही हैं। उनकी कविताएँ दलित जीवन के अनुभवों और संघर्नों की सशक्त अभिव्यक्ति हैं।

'जूठन' ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा है। यह अप्रतिम कृति उनकी ख्याति का आधार है। यह दलित जीवन का प्रामाणिक दस्तावेज है। यह वही जीवन है जिसे वाल्मीकि जी ने जीया और भोगा है। उनके तमाम क-ट, यातना, उपेक्षा और प्रताड़ना अपने यथार्थ रूप मे इसमें अभिव्यक्त हुये हैं। यह आत्मकथा दलित जीवन की सच्चाई को परत-दर-परत उधेड़ती है और भारतीय समाज के थोथे आदर्श, मूल्य-मान्यताओं तथाकथित संस्कृति की समीक्षा करती है। 'जूठन' का अनुवाद अंग्रेजी और पंजाबी भा-ा में हो चुका है, इससे इसकी लोकप्रियता का अनुमान लगाया जा सकता है। 'जूठन' ने ओमप्रकाश वाल्मीकि को दलित साहित्य के प्रतिनिधि रचनाकार के रूप में ही नहीं बल्कि प्रतिनिधि भारतीय साहित्यकार के बतौर स्थापित कर दिया है।

'सलाम' और 'घुसपैठिए' उनके दो कहानी संग्रह हैं। इनकी कहानियाँ दलित जीवन की तमाम पीड़ा, यातना और अपमान की झकझोर देने वाले अनुभवों की कहानियाँ हैं, जो एक ऐसे यथार्थ से साक्षात्कार कराती हैं और जो हजारों हजार साल से दलित समाज झेल रहा है। इसमें दलितों का जीवन-संघर्ा और उनकी बेचैनी जीवंत हो उठी है। दलित जीवन की व्यथा, छटपटाहट और मुक्ति के सरोकार और मार्ग इन कहानियों में साफ-साफ दिखाई पड़ते हैं। वे एक तरफ जहाँ साहित्य में वर्चस्व की सत्ता को चुनौती देती हैं वहीं दबे-कुचले, शोनित पीड़ित समूह की मुखरता देखकर उसके इर्द-गिर्द फैली विसंगतियों पर भी चोट करती हैं। 'घुसपैठिए' की कहानियों में व्यवस्था के प्रति गहरा आक्रोश, कथा विन्यास के अनुरूप तर्क और विचार तथा दलितों के सुख-दुःख, उनकी मुखरता और संघर्ा विद्यमान है। इसकी कहानियों में दलित और स्त्री की असाधारण उत्पीड़न की वेदना, पीड़ा और वंचना की अभिव्यक्ति हुई है उनकी कहानियों का शिल्प नवीन है और अंतर्वस्तु तथा संघर्ा का सौंदर्य निखर कर सामने आया है।

वाल्मीकि ने कुछ कवियों और उनकी कविताओं का संकलन भी प्रकाशित किया है। इस दृ-टि से वे संकलनकर्त्ता भी हैं। 'दर्द के दस्तावेज', 'इन दिनों' और 'उत्तर हिमानी' उनकी संकलित कवि-कृतियां हैं। उन्होंने 'प्रभा-साहित्य के दलित विशे-ांक' का अतिथि संपादन किया है। उनकी रचनाएँ विभिन्न भा-ाओं तथा अंग्रेजी, बंगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी एवं उर्दू में अनुदित हुई हैं। वाल्मीकि जी की नाटकों में भी काफी रुचि है। अब तक उन्होंने साठ नाटकों में अभिनय और कई नाटकों का निर्देशन किया है। वे अनेक सामाजिक और साहित्यिक संस्थाओं से संबद्ध रहे हैं। देश के अनेक विश्वविद्यालयों में उनकी महत्वपूर्ण कृतियों, 'जूठन', 'बस बहुत हो चुका', 'सलाम', 'घुसपैठिए' आदि पर शोधकार्य भी हो रहे हैं। इससे उनके साहित्यिक महत्व का पता चलता है।

उन्हें अब तक दर्जनों पुरस्कार और सम्मान मिल चुके हैं। वाल्मीकि जी को 1993 में डॉ. आंबेडकर रा-ट्रीय पुरस्कार, 1995 में परिवेश सम्मान और 1996 में जयश्री सम्मान से सम्मानित किया गया है। इसके अतिरिक्त उन्हें अभिनय एवं निर्देशन के लिए दर्जनों पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं। वाल्मीकि जी प्रथम हिंदी दलित लेखक साहित्य सम्मेलन जामपुर की अध्यक्षता भी कर चुके हैं। इससे उनकी सक्रियता और लोकप्रियता का पता चलता है।

**घृणा तुम्हें मार सकती है**

चाहे संकीर्ण कहो या पूर्वाग्रही
मैं जिस टीस को बरसों बरस
सहता रहा हूँ
अपनी त्वचा पर
सूई की चुभन जैसे,
उसका स्वाद एक बार चखकर देखो
हिल जायेगा पाँव तले ज़मीन का टुकड़ा।

मेरे और तुम्हारे बीच एक रेतीला ढूह है
जो किसी अंधड़ का इन्तजार करने से पहले
किसी भी वक्त फट सकता है
जिसके गर्भ से निकलेंगे
घृणा में लिपटे कुटिल शब्द
जिन्हें जलना होगा
दहकती भट्ठी में
रोटी की महक में बदलने के लिए।

रोटी की महक
जानती है आग का स्वाद
और,
पहुँचती है नासिक रन्ध्र तक
हड्डियों के रस में डूब कर।

यदि, तुम्हें पहुँचना है
इस महक तक
अपने कापुरु-ा से कहो
भय छोड़कर बाहर आये
जैसे छत पर आती है धूप।

घृणा तुम्हें मार सकती है
तोड़ सकती है
पर अपने ही दायरे में
जिन्दा नहीं रख सकती
ताजा हवा देकर
और, नहीं सुना सकती
प्रेम कविता
मौसम के रंगीन पंखों पर बैठाकर!

**कवि परिचय, मोहनदास नैमिशराय**

दलित चिंतन के आधार-स्तम्भ बुद्ध, फुले, पेरियार, बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर हैं। इस चिंतन का मूल आधार आंबेडकर की प्रेरणा और विचार है। दलित साहित्य आंबेडकर की वैचारिक प्रणाली को लेकर चल रहा है। दलित साहित्य वही है जो दलितों द्वारा लिखा जा रहा है। दलितों द्वारा लिखा गया साहित्य दलित साहित्य है। प्रसिद्ध दलित साहित्यकार मोहनदास नैमिशराय के शब्दों में ''दलित साहित्य दलितों का ही हो सकता है, क्योंकि उन्होंने जो नारकीय, उपेक्षापूर्ण जीवन जिया है, वह कल्पना की चीज नहीं है। आज भी वर्चस्ववादी हमें वंचितों की ओट में रखना चाहती हैं। दलित साहित्य की पहचान है चेतना का उगता सूरज। वही हमारी मुक्ति का संदेश होगा। दलित साहित्य जख्मी लोगों का साहित्य है।''

मोहनदास नैमिशराय प्रसिद्ध दलित साहित्यकारों में से एक हैं। ये एक ही साथ कवि, नाटककार, कहानीकार, पत्रकार, उपन्यासकार, चिंतक, निबंधकार आदि हैं। 5 सितम्बर 1949 को मेरठ, उत्तर प्रदेश में जन्में मोहनदास नैमिशराय एम.ए., बी.एड, तक शिक्षा प्राप्त हैं। हिन्दी, अंग्रेजी और मराठी भा-ा पर इनका एकसमान अधिकार प्राप्त है।

**साहित्यिक योगदान**

बहुमुखी प्रतिभा के धनी मोहनदास नैमिशराय ने अनेक विधाओं में विपुल साहित्य लिखा है। कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबंध आदि अनेक विधाओं में उनकी दर्जनों रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। 'अदालतनामा', 'क्या मुझे खरीदोगे', 'डेढ़ इंच मुस्कान', 'हेलो कामरेड' मोहनदास नैमिशराय के नाटक हैं। इन्होंने इन नाटकों का लेखन, अभिनय और निर्देशन भी किया है। ये एक अच्छे अभिनेता भी रहे हैं।

'सफदर एक बयान' और 'आग और आन्दोलन' मोहनदास नैमिशराय के दो काव्य-संग्रह हैं। अपनी कविताओं के माध्यम से नैमिशराय हिन्दू व्यवस्था के शो-नक चरित्र को उघाड़ते हैं और दलितों की स्थिति, व्यवस्था विरोध, आक्रोश आदि का सही आकलन करते हैं। 'रात में दूध ले आना' और उनकी महत्वपूर्ण कविता है। मोहनदास नैमिशराय ने उपन्यास भी लिखे हैं। 'नया कुरने खरीदोगे', 'मुक्ति पर्व' और 'वीरांगना झलकारीबाई' उनके तीन उपन्यास हैं।

विचार संग्रह व अन्य ग्रन्थों के अन्तर्गत उनकी अधिकांश रचनाएँ आती हैं। इस तरह की रचनाओं में है, 'बाबा साहब ने कहा था ', 'भारत रत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर', 'आत्म सह संस्कृति : उद्‌भव और विकास', 'उजाले की ओर बढ़ते कदम', 'जूठन', 'स्वतंत्रता संग्राम में दलित क्रांतिकारी', 'कास्ट एंड रेस' अंग्रेजी में लिखी गयी है।

**कविता के बारे में**

'सच यही है' साम्प्रदायिकता की समस्या को लेकर लिखी गई मोहनदास नैमिशराय की महत्वपूर्ण कविता है। साम्प्रदायिकता उसी समाज का भयावह रोग है जिस समाज का हिस्सा दलित भी है। दलित कवि साम्प्रदायिकता को कैसे देखता है इस संदर्भ में भी यह महत्वपूर्ण कविता है। यह कविता हमें साम्प्रदायिकता की  भी-णता की अनुभूति कराकर आगाह करती है। यह कविता बताती है कि ऐसे कामों से किसी को कुछ नहीं मिलता बल्कि वंचितों की एकता की संभावना भी खत्म हो जाती है और मुक्ति का वृहद स्वप्न भी खंड-खंड हो जाता है। इसलिए कविता जुड़ाव की बात करती है और साम्प्रदायिकता को नकारती है।

**सच यही है**

सच यही है
मंदिर में आरती गाते हुए भी
नजदीक की
मसजिद तोड़ने की लालसा
हमारे भीतर जागती रहती है
और मसजिद में नमाज पढ़ते हुए भी
पास के मंदिर के बारे में भी
नागफनी के तरह
वैसी ही हलचल उगती है।
बात एक ही है
पहले सांप्रदायिक दंगे कराओ
फिर शांति मार्च के ढेर सारे आयोजन
सच यही है
कब्रों पर फूल उगाने जैसा।
सच की कल्पना
कितनी कड़वी होती है
और वीभत्स भी
एक सच
जो पहले से ही तैयार होता है।

दूसरा सच
बाद में बनाया जाता है।

जैसे पहले कब्र बनाना-
फिर उस पर फूल उगाना
सच यही है।
घर के एक सुनसान कोने में
लुटी-पिटी सी
कच्ची जमीन पर पसरी
एक अदद औरत
गुमसुम-सी, अपने आप में खोई हुई
घर से गए
अपने आदमी के लौटने की
मीठी कल्पना सीने से लगाए
दरवाजे की ओर आँखें बिछाए
पिछले एक दिन और एक रात से
इंतजार कर रही है।
सच यही है।

बाहर
पुलिस की पदचापों से धरती गूँजती है
और भीतर उसका दिल दहलता है
पुलिस के बूट, जमीन को नहीं
उसकी छाती को रौंदते हैं जैसे।
एक सच
जो परसों रात उसने देखा था।

दूसरा सच
वह देखना नहीं चाहती
घर से गया हुआ उसका मर्द
अब कभी वापस लौटकर नहीं आएगा
सच यही है।
घर से गए
उसके आदमी की आँतें
किसी रामपुरिया चाकू से कटी-फटी
किसी कूड़े के ढेर के नजदीक पड़ी होंगी।
या उसका झुलसा चेहरा
और जला हुआ शरीर
किसी नहर/नदी/नाले के पास पड़ा होगा
सच यही है।

## 2.3 नए सौंदर्यशास्त्र का प्रश्न और दलित साहित्य

दलित साहित्य के मूल उद्देश्य में वर्ण-जाति-दास्य की अवैज्ञानिक परंपरा द्वारा व्यवस्था के विरोध में समता मूल्याधारित समाज की स्थापना करना है। इसके केन्द्र में मानव की मुक्ति है। मानवीय संबंधों की बुनियाद सहि-णुता, प्रेम, साहचर्य और मानव गरिमा की सुरक्षा का भाव इसके अनिवार्य सिद्धान्त है। इस नई सामाजिक रचना के लिए हाशिए के बहि-कृत, उपेक्षित, उत्पीड़ित शोि-त दलितों में आत्मबोध जगाकर हीनताबोध से मुक्ति दिलाकर समता के संघर्-ा के लिए प्रेरित करता है। गतिशील, समतावादी और न्यायपूर्ण व्यवस्था का पक्षधर दलित साहित्य जड़मूल यथास्थितिवाद, वर्चस्वाद, धर्म के आंडबर का विरोधी है,

इसलिए इसे समूल मिटाने के डॉ. आंबेडकर के दर्शन-विचार को अपनाता है। वर्ण-जाति दासता की हजारों व-र्ों की परंपरा के निर्मूलन की सिद्धांत को अपना अंतिम लक्ष्य मानकर जाति के कारण मिली उपेक्षा, वंचना, अवहेलना, पीड़ा, वेदना, अपभाव और अभाव के धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारकों की पड़ताल करता है। समाजजीवन, आर्थिक व्यवहार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, राजनीतिक सत्ता और धार्मिक क्षेत्र में प्रवेश नि-ेण द्वारा समाज के कमजोर, उपेक्षित बहि-कृत और उत्पीड़ित वर्ग को हाशिए पर रखकर संपूर्ण इतिहास में इनका नामोल्लेख भी नहीं आने दिया। गुलामों का इतिहास लिखा नहीं जाता अथवा उनके अस्तित्व को नकारा जाता है। यही परंपरा साहित्य में भी अभी तक चली आ रही हैं। आभिजात्य साहित्य में दलित जीवन के यथार्थ के प्रति-संवेदनहीनता का परिचय हिन्दी के पिछले सौ व-र्ों के साहित्य इतिहास से स्प-ट है। दलित साहित्य ने सीमान्त के इन्हीं उपेक्षित, वंचित-दलितों के जीवन यथार्थ के उन अनछुए पहलुओं को रचनात्मक विस्तार देकर उस छुपाई गई सामाजिक सच्चाई को मुखर करता है। दलित साहित्य ब्राह्मणवादी अमानु-ा परंपराओं के विरोध के लिए प्रयुक्त प्रतिमानों रचना के भावबोध और अंतर्वस्तु के लिए दलित जीवन सरोकार, परिवेशगत सच्चाई, जनसमुदाय की भा-ा से चुनता है।

मुख्यधारा के साहित्य में पिछले सौ व-र्ों से यथास्थितिवाद, धर्म-आडम्बर तथा वर्ण-दास्य के विरोध का स्वर ही सुनाई नहीं देता क्योंकि वर्ण-जाति-लिंग भेद-भाव समर्थक साहित्य में उपेक्षितों की पक्षधरता नहीं करता हिन्दी का आभिजात्य साहित्य के केन्द्र में अध्यात्मवाद और चैतन्यवाद रहा है, मानवीय संवदेना के अभाव में यह दलितों के अभाव और वंचना, दुःखवेदना और उत्पीड़न-अवहेलना को समझने में असमर्थ रहा है। इसीलिए इसके द्वारा तयशुदा सौंदर्यशास्त्रीय मानदंड मानवीय मूल्यों की स्थापना करने में अपर्याप्त सिद्ध हो चुके हैं।

दलित साहितय ने ऐसे सौंदर्यशास्त्रीय मानकों को रचा है जो वंचितों-दलितों के जीवन सरोकारों की अभिव्यक्ति दे सकें। दलित साहित्य की केन्द्रीय वि-ायवस्तु सामाजिक वास्तविकता है की कलात्मक अभिव्यक्ति है। जिसके द्वारा समाज में व्याप्त जाति, धर्म तथा लिंग आधारित घृणा, तिरस्कार, ई-र्या ओर द्वे-ा को मिटाकर प्रेम, करूणा और भाईचारे-बहनापे के मानवतावादी संबंधों का समाज बन सके। इसकी भवि-य के प्रति दृ-टि सकारात्मक और मानवीय गरिमा की पक्षधरता करती है। यह साहित्य क्रूरता और हिंसा के विरोध में अपनी तीव्र प्रतिक्रिया दर्ज करता है और हिंसात्मक इतिहास के उन काले पन्नों पर बिखरे दलित उत्पीड़न शो-ाण के काले इतिहास का पूरा-पूरा हिसाब भी माँगता है। डॉ. आंबेडकर, म.फुले, बुद्ध के दर्शन के बहुजन-हिताय-बहुजन सुखाय के वैचारिकी और सैद्धांतिकी को व्यावहारिक रूप में लागू करने का अथक प्रयास है। इसीलिए इसकी सृजनात्मकता में इन्हीं तत्वों को विस्तार स्प-ट रूप से देखा जा सकता है।

## 2.4 अछूत की शिकायत का मर्म और महत्व

हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' के समाजशास्त्र पर विचार करें तो हमारा हिन्दी भा-ी समाज नंगा हो जाता है। जिन दिनों हीरा डोम की कविता आई थी उन दिनों कोई व्यापक दलित आंदोलन नहीं था। उपनिवेशवाद और सामन्तवाद के खिलाफ लड़ाई चल रही थी। यह लड़ाई लड़ने वाले कुछ महत्वपूर्ण समाज-सुधारक अपने-अपने स्तर पर इस बुराई से भी लड़ रहे थे लेकिन उनका विरोध करने वाले भी समाज में मौजूद थे। दरअसल, विवश हो दुख जो पीता है वही जानता है कि जब पीड़ा रगों में बहती है तो उसकी गति कैसी होती है और जब वह आँखों से बहती है तब उसका रंग कैसा होता है। महात्मा ज्योतिबा फुले ने दर्द के अहसास को दर्शाते हुए कहा था कि 'राख ही जानती है जलने का दर्द*। जिन्होंने वंचना का दुःख नहीं सहा है, वे वर्ण-व्यवस्था को तो उचित

ठहराएंगे ही। जिस प्रकार देश की गुलामी सवर्ण शिक्षितों, समझदारों की नींद ले उड़ती है, उसी प्रकार वर्ण व्यवस्था की गुलामी दलित वर्ग में पैदा हुए शिक्षितों समझदारों की नींद ले उड़ती है। दलित इस देश में दुहरे गुलाम थे। जो लोग स्वाधीनता आंदोलन पर इस दृ-टि से विचार करेंगे वे डॉ.आंबेडकर को सौ प्रतिशत सही पाएंगे। इतिहास साक्षी है कि उन दिनों भी एक दलित पैदा होने के बाद पहले सवर्ण समाज का गुलाम होता था फिर अंग्रेजों का। गुलामी की इस अनुभूति में जो तनाव है, उसी ने डॉ. आंबेडकर को आंदोलित किया था। अनुभूति के इस तनाव को ^हीरा डोम* की कविता में देख सकते हैं। डॉ. आंबेडकर की ईमानदारी को साबित करने वाली यह कविता उनके आंदोलन से पूर्व आई थी। उन दिनों देश में आजादी की लड़ाई चल रही थी। इस कविता में भी आजादी की ही इच्छा है, लेकिन पहले समाज के ठेकेदारों से। इस प्रबल अनुभूति के कारण ही इस पूरी कविता में सदियों से दासता की पीड़ा देने वाली सन्तान परंपरा का ही जिक्र है। ब्राह्मणवाद द्वारा थोपी गई जाति आधारित गैरबराबरी, घृणा और तिरस्कार से। दैवीय परंपरा के रूप में स्थापित करने वाले हीरा डोम जानते थे कि अंग्रेजी शासन उनका वास्तविक और स्थाई शत्रु नहीं है।

ßहमनी के दुःख भगवनओं न देखता जे
हमनी के कबले कलेसवा उठाइबि।Þ

दुख और ईश्वर के अस्वीकार की ऐसी अभिव्यक्ति हिन्दी कविता में दुर्लभ है। एक दलित को लगता है कि ईश्वर भी दलितों की नहीं सुनता। हीरा डोम इस कविता के माध्यम से अपना प्रतिरोध दर्ज करते हैं। सुखद है कि प्रतिरोध के इस स्वर को आज के दलित कवि जानते - पहचानते हैं। और अकारण नहीं हैं कि वे हिन्दी में किसी और से नहीं, हीरा डोम से ही जुड़ते हैं। इन सबकी कविता हीरा-डोम की विरासत का ही विकास है। ये ही हीरा डोम के सच्चे उत्तराधिकारी भी हैं। हीरा डोम ने लिखा है -

ßमुँह बान्हि ऐसन नोकरिया करत बानी
बभने के लेखे हम भिखिया माँगब जा
ठकुरे लेखे नाहिं लउरि चलाइबि
सहुआ के लेखे नाहि डाँड़ी हम मारब जा
अहिरा के लेखे नाहि गइया चराइबि।Þ

इन पंक्तियों में व्यंग्य है, दुःख है और पीड़ित ईमानदारी है। यहाँ सवर्ण समाज के अराजक दृ-टि लोक और क्रूर कारनामों का खुला चिट्ठा है। एक दलित की दृ-टि में ^अहिर* अर्थात् ^यादव* शो-नक समाज का ही अंग है। गौर किया जाए जाति के रूप में, व्यक्ति के रूप में नहीं। हीरा डोम लिखते हैं -

ßहड़वा मसुइआ के देहिंया ह हमनी के।
ओकरे के देहिया बभनवों के बानी
ओकरा के घरे - घरे पुजवा होखत बाटे।
सगरो इलकवा भइलैं जजमानी
हमनी के इनरा के निगिचे न जाइले जाँ
पांके में से भरि - भरि पिअतानी पानी।Þ

यह है वर्ण-व्यवस्था पर आधृत भारतीय समाज की सच्चाई। एक सा शरीर, एक सा खून, एक सा रंग, पैदा होने का एक ही तरीका लेकिन जीवन की सुविधाओं में जमीन - आसमान का फ़र्क। एक को गाँव में रहने तक की छूट नहीं है, दूसरे की चरण पूजा। एक को खाने के लिए कुछ नहीं - दूसरे के लिए सारा इलाका ही उपलब्ध है। वह भी महज इसलिए क्योंकि वह ^जाति विशेष* में पैदा हुआ है। हीरा डोम की ये बातें अनुभव के आवें

में घृणा की तेज आंच पर पक कर बाहर आई हैं। सामाजिक व्यवस्था में सोपानीकृत श्रेणी विभाजन, जन्मना अस्पृश्यता का पर्याय बना दी गई मानकता, घृणा-तिरस्कार, आर्थिक विवेचना, भूख, गरीबी से संघर्ष करते जीवन जीने की विवशता जिस एक विचारधारा ने थोपी थी, उसके विरोध का प्रयास ही व्यक्ति की चेतना को निर्धारित तो करता ही है, कई बार समाज की गति से व्यक्ति में नई चेतना का स्फुरण भी हो जाता है। अभाव और अपमान का जीवन जीने वाले हीरा डोम के साथ ऐसा ही हुआ होगा।

### 2.4.1 हीरा डोम की विरासत और हिन्दी की दलित कविता

हीरा डोम की रचना से अनुमान लगाया जा सकता है कि उनकी स्कूली शिक्षा शायद ही हुई होगी। उनकी कविता में उनकी पीड़ा पूरी तीव्रता से व्यक्त हुई है। सुखद है कि उनकी इस पीड़ा को समाप्त करने की राह पर है उनसे जुड़ी हिन्दी की दलित कविता। अब दलित कवि सिर्फ पीड़ा का जिक्र नहीं करते, बल्कि पीड़ा देने वाली आभिजात्य सवर्ण वर्ग के यथास्थितिवाद की खबर भी लेते हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं

बस्स,
बहुत हो चुका चुप रहना/निरर्थक पड़े पत्थर अब काम आएंगे
संतप्त जनों के। (युद्धरत आम आदमी पृ. 7, दलित अंक)

दलित कवि कंवल भारती लिखते हैं-
अब यह नहीं हो सकता
कि तुम मालिक बने रहो हमारे
पीढ़ी - दर - पीढ़ी
हम बने रहे तुम्हारे गुलाम
पीढ़ी - दर - पीढ़ी।

हीरा डोम अपनी एक कविता की बदौलत दलित कविता को जहाँ छोड़ गए थे, हिन्दी की दलित कविता उसके आगे की यात्रा कर रही है। हीरा डोम के वारिस उनकी अधूरी इच्छाओं को, जिन्हें बहुत दमित किया गया है, पूरा करके एक सुखद मंजिल की ओर बढ़ रहे हैं। उनकी चिन्ता अब इस तरह व्यक्त हो रही है-

ßऐसी जिन्दगी किस काम की
जो सिर्फ घृणा पर टिकी हो
कायरपन की हद तक
पत्थर बरसाये
कमजोर पड़ोसी की छत पर।Þ

(ओमप्रकाश वाल्मीकि : युद्धरत आम आदमी, पृ.7)

### 2.4.2 वर्ग-वर्ण का प्रश्न और हिन्दी की दलित कविता

भारतीय समाज एक वर्णवादी संरचना का समाज है। यहाँ मार्क्सवाद की बात करते हुए भी जाति को विस्मृत करना खतरनाक हादसे की ओर बढ़ना है। भारत में किसी भी प्रकार की समतावादी राजनीति करने के लिए जरूरी है कि पहले वर्ण की समस्या से उलझा जाए। प्रो. मैनेजर पाण्डेय ने अपने एक साक्षात्कार में बहुत मार्के की बात कही है- ßभारतीय समाज को समझने के लिए वर्ण और वर्ग को साथ-साथ ध्यान में रखना जरूरी है। वास्तव में वर्ग एक धारणा है, और वर्ण या जाति एक वास्तविकता है। संभव है कि भारतीय समाज की वर्णवादी संरचना में जो दलित हैं वे वर्ग की धारणा के

अनुसार सर्वहारा भी हों और अधिकांशतः ऐसा है भी। लेकिन ध्यान रखने की बात है कि वर्ग की धारणा का आधार आर्थिक होता है जबकि वर्ण या जाति का सम्बन्ध सामाजिक के साथ-साथ आर्थिक स्थिति से भी होता है।Þ (युद्धरत आम आदमी, दलित साहित्य अंक, पृ-ठ-179) कहने का आशय यह है कि जाति व्यवस्था भारतीय समाज की वह कड़वी और अमानवीय सच्चाई है जिससे मुँह मोड़ना कतई उचित नहीं है। जाति व्यवस्था का सर्वाधिक घृणित रूप गांवों में देखने को मिलता है। यह अकारण नहीं है कि डॉ. आंबेडकर गांवों की सामाजिक व्यवस्था से सर्वाधिक घृणा करते थे। कोई भी संवेदनशील एवं जागरूक व्यक्ति मनु-यता की हत्या को बर्दाश्त नहीं कर सकता - और यदि वह दलित जाति दंश को झेल रहा हो तब तो और भी नहीं। हम गौर करें तो पाएंगे की हिन्दी की दलित कविता में केंद्रीय नायकत्व डॉ. आंबेडकर का है और सर्वाधिक घृणा इस जाति व्यवस्था से ही है-

जाति आदिम सभ्यता का/नुकीला औजार है

जो सड़क चलते आदमी को
कर देता है छलनी
एक तुम हो
जो अभी तक इस .....जाति से चिपके हैÞ

(ओमप्रकाश वाल्मीकि-युद्धरत आम आदमी.पृ.10)

यह जाति की विकृत व्यवस्था से उपजी घृणा है जो इतने तीखे रूप में व्यक्त हुई है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ^जाति* की राजनीति को बखूबी पहचानते हैं। जाति की राजनीति की सही समझ के कारण ही वे भीड़ की जाति पूछना चाहते हैं और यह भी कि-

लुटेरे लूट कर जा चुके हैं
कुछ लूटने की तैयारी में है
मैं पूछता हूँ
क्या उनकी जाति तुमसे ऊँची है। (वही)

जाति की यह सही समझ सदियों से भोगे अनचाहे दुःख की कोख से पैदा हुई है। सदियों से भोगा दर्द जब शब्द बनता है तो दर्द देने वालों के लिए बहुत खतरनाक होता है। दलित कविता उनके लिए खतरनाक है जो आज भी जाति व्यवस्था की वकालत करते हैं और चाहते हैं कि उनका वर्चस्व बना रहे। ऐसे लोगों से कंवल भारती का सीधा प्रश्न है-

यदि यह विधान लागू हो जाता कि
तुम्हारे जीवन का कोई मूल्य नहीं
कोई भी कर सकता है, तुम्हारा वध
तुम्हारी स्त्री, बहिन और पुत्री के साथ
कर सकता है बलात्कार
जला सकता है घर-बार
तब तुम्हारी नि-ठा क्या होती? (तब तुम्हारी नि-ठा क्या होती, पृ.-39-40)

जाहिर है वही होती जो दलित कवियों की है और मलखान सिंह की इन पंक्तियों में अभिव्यक्त हुई है-

ßमेरी खुद की थूथड़ पर
अनगिनत चोटों के निशान हैं
जिन्हें अपने बेटे के चेहरे पर
नहीं देखना चाहता।Þ (सुनो ब्राह्मण, पृ.-10)

जाति की कड़वी सच्चाइयाँ और भी हैं। सवर्ण जाति में पैदा हुए राम जूठन खाकर पुरू-ोत्तम हो गए और सदियों से जूठन खा रहे दलित अछूत ही बने रहे। इस गहरी विडम्बना को रेखांकित करती हैं सी.बी.भारती की ये मार्मिक पंक्तियाँ–

ßजूठन खाने का/यह कैसा तिलिस्म
पुरू-ा से मर्यादा पुरू-ोत्तम हो गए राम
सबरी की जूठन खाकर। और हम पले
जूठन पर ही आजन्म
मगर हम अछूत हो गए।Þ (आक्रोश, पृ.-7)

दुःख का रंग जब बहुत गाढ़ा होता है तब पर्दे के पीछे की चीजें भी अलक्षित नहीं रह जातीं।

## 2.5 कविताओं का पाठावलोकन

जैसा कि आपको पता है कि इस इकाई में दो कविताओं का अध्ययन करना है। सुविधा के लिए हम दोनों कविताओं का अलग-अलग पाठावलोकन और विश्ले-ाण करेंगे। आइए, पहले ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता ^घृणा तुम्हें मार सकती है* का पाठावलोकन करें:

### ?k.kk rqEgsa ekj ldrh gS

चाहे संकीर्ण कहो या पूर्वाग्रही
मैं जिस टीस को बरसों बरस
सहता रहा हूँ
अपनी त्वचा पर
सूई की चुभन जैसे,
उसका स्वाद एक बार चखकर देखो
हिल जायेगा पाँव तले ज़मीन का टुकड़ा।

मेरे और तुम्हारे बीच
एक रेतीला ढूह है
जो किसी अंधड़ का इंतजार करने से पहले
किसी भी वक्त फट सकता है
जिसके गर्भ से निकलेंगे
घृणा में लिपटे कुटिल शब्द
जिन्हें जलना होगा
दहकती भट्ठी में
रोटी की महक में बदलने के लिए।
रोटी की महक में बदलने के लिए।

रोटी की महक
जानती है आग का स्वाद
और,
पहुँचती है – नासिका रन्ध्र तक
हड्डियों के रस में डूब कर।

यदि, तुम्हें पहुँचना है
इस महक तक
अपने का पुरुष से कहो
भय छोड़कर बाहर आये
जैसे छत पर आती है धूप।

घृणा तुम्हें मार सकती है
तोड़ सकती है
पर अपने ही दायरे में
जिन्दा नहीं रख सकती
ताजा हवा देकर
और, नहीं सुना सकती
प्रेम कविता
मौसम के रंगीन पंखों पर बैठाकर!

## 2.5.1 ^घृणा तुम्हें मार सकती है* का पाठावलोकन

हिन्दी के दलित साहित्यकारों में सर्वाधिक सम्मान और प्रति-ठा इस कविता के रचयिता ओमप्रकाश वाल्मीकि को मिली है। उन्होंने अपनी रचनाओं से व्यापक पाठक समाज और आलोचकों का ध्यान अपनी ओर खींचा है। अध्ययन के लिए निर्धारित उनकी कविता ^घृणा तुम्हें मार सकती है* एक बड़े अर्थ फलक वाली कविता है। यह कविता ऐसे लोगों को सम्बोधित है जो वर्ण व्यवस्था के पैरोकार हैं। जो वर्ण व्यवस्था के शिकार लोगों की पीर नहीं समझते। यह कविता उनसे तार्किक ढंग से संवाद करना चाहती है। यह अकारण नहीं है कि कविता के आरंभ में ही कवि अनुभूति की उस सच्चाई की बात करता है, जिसके आधार पर ही वह वर्ण व्यवस्था को एक शो-ाक और अमानवीय व्यवस्था के रूप में व्याख्यायित कर सका है। कविता की आरंभिक पंक्तियां देखिए-

ßचाहे संकीर्ण कहो या पूर्वाग्रही
मैं जिस टीस को बरसों बरस
सहता रहा हूँ
अपनी त्वचा पर
सुई की चुभन जैसे,
उसका स्वाद एक बार चखकर देखो
हिल जाएगा पाँव तले ज़मीन का टुकड़ा।Þ

यह है कविता का प्रस्थान बिन्दु! बात वहाँ से शुरू हुई है, जिसका असर सीधे हृदय पर होता है। जिसका प्रभाव आपकी अस्मिता पर पड़ता है। कवि संकीर्ण और पूर्वाग्रही कहे जाने का खतरा उठाता है। वह जानता है कि सच खतरे उठा कर ही कहे जाते हैं। आप सबको खुशी-राजी रखते हुए किसी सच को नहीं कह सकते। कोई न कोई नाराज़ ज़रूर होगा। सच कहने वाले अजातशत्रु नहीं होते। और सच यदि वर्ण व्यवस्था का हो तो शत्रु भी बहुतेरे हो सकते हैं। और साथी बहुत कम। लेकिन वर्ण व्यवस्था या किसी भी तरह के शो-ाण के शिकार की वाणी से शहद तो नहीं टपकेगा। एक लोकतांत्रिक और आधुनिक कहे जाने वाले समाज में यदि ^जाति* मनु-यता पर भारी पड़े तो इससे बड़ी शर्म की बात कुछ और नहीं हो सकती। डॉ. आंबेडकर ने अपना पूरा जीवन इसी जाति व्यवस्था को समूल न-ट करने में लगा दिया। यह अकारण तो नहीं है कि वाल्मीकि जैसे दलित रचनाकार अपने को उन्हीं के करीब पाते हैं। उनकी प्रस्तुत कविता भी डॉ. आंबेडकर के विचारों को ही प्रभावशाली ढंग से पाठकों तक ले जाती है। आप उनकी इस कविता का

अध्ययन कर रहे हैं, इसलिए इसकी एक-एक पंक्ति पर आपकी दृ-टि होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं हुआ तो कविता के मर्म तक पहुँचने में असुविधा होगी। कविता की एक पंक्ति छूटी तो समझिए कि कविता तक पहुँचने का एक रास्ता छूट गया। इसलिए आपको कोई रास्ता छोड़ना नहीं है।

प्रस्तुत कविता की आरंभिक पंक्तियाँ यह साफ इंगित करती हैं कि कवि को पता है कि उसका सच उन लोगों को सोचने पर मजबूर करेगा जो वर्णवादी समाज के ही पक्षधर हैं। जाहिर है वे लोग ऐसी रचना करने वाले कवि को पूर्वाग्रही और संकीर्ण ही कहेंगे। पर वह मनु-य क्या करे जो बरसों-बरस से उस दुःख को सह रहा है, जो उसे अकारण दे दिया गया है। उसके दुःख को पूर्व जन्म के कर्मों का फल बताकर उचित सिद्ध किया जाता रहा है। मनु-य होने के बावजूद उसे घृणा का पात्र समझा जाता रहा है। आखिर क्यों? क्या ^वर्ण* मनु-यता से बड़ा है या हो सकता है? जाहिर है कि नहीं हो सकता लेकिन दलितों ने सदियों से घृणा को सहा है। वे वंचना और शो-ण के शिकार रहे हैं। अब उनमें आत्मबोध जग चुका है इसलिए दलित कवि आँख में आँख डालकर उन लोगों से उन दुखों को और घृणा को एक बार सहने की बात करता है, जिन्हें दलितों ने तमाम उम्र सहा है। इस कविता में कवि आगे कहता है-

मेरे और तुम्हारे बीच
एक रेतीला ढूह है
जो किसी अंधड़ का इन्तजार करने से पहले
किसी भी वक्त फट सकता है
जिसके गर्भ से निकलेंगे
घृणा में लिपटे कुटिल शब्द
जिन्हें जलना होगा
दहकती भट्टी में
रोटी की महक में बदलने के लिए।

कवि जानता है कि ^वर्ण व्यवस्था* रेतीले ढूह से अधिक कुछ नहीं है। बस कुछ लोग हैं जो इसे अभेद्य किला बता रहे हैं। लेकिन किसी झूठ की उम्र उतनी नहीं होती, जितनी इसकी हो चुकी है, इसलिए यह किला कभी भी भरभरा कर टूट सकता है। और हर हाल में इसे टूट जाना चाहिए। ज्यों ही ^वर्ण व्यवस्था* और उसकी कोख से जन्मी घृणा का अन्त होगा त्योंही भारतीय समाज की तस्वीर बदल जाएगी। तब एक सर्वण और एक दलित के घर की रोटी के स्वाद में अंतर बताने वाले नहीं रह जाएंगे। सवर्ण और दलित जैसे बंटवारे नहीं रह जाएंगे। प्रेमचंद जिस रा-ट्रीयता का स्वप्न देख रहे थे, वह रा-ट्रीयता आ जाएगी। प्रेमचंद ने लिखा था, ''हम जिस रा-ट्रीयता का स्वप्न देख रहे हैं; उसमें जन्मगत वर्णों की गन्ध न होगी। वह हमारे श्रमिकों और किसानों का साम्राज्य होगा, जिसमें न कोई ब्राह्मण होगा, न हरिजन, न कायस्थ, न क्षत्रिय, उसमें सभी भारतवासी होंगे, सभी ब्राह्मण होंगे या सभी हरिजन।Þ प्रेमचंद के समय में दलित संज्ञा के लिए हरिजन शब्द का प्रयोग होता रहा है।

प्रेमचंद भेद रहित समाज देखना चाहते थे। वाल्मीकि की यह कविता भी तीखेपन के भीतर इसी आकांक्षा को समेटे है। कविता में आगे आता है :

रोटी की महक
जानती है आग का स्वाद
और,
पहुँचती है नासिका रन्ध्र तक
हड्डियों के रस में डूबकर।

जाहिर है, ये पंक्तियाँ श्रम की संस्कृति को सामने लाती हैं। दलित और अन्य सर्वहारा वर्ग के लिए ^रोटी* के मायने ही कुछ और होते हैं। वे रोटी का जुगाड़ अपने रक्त का पसीना बनाकर करते हैं। वे जानते हैं कि वर्णवादी और पूँजीवादी शो-नकों की निगाह उनकी रोटी पर ही है। वे किसी भी हालत में अपनी रोटी पर शो-नकों का अधिकार नहीं रहने देना चाहते हैं। और इसीलिए लड़ना चाहते हैं। वे अपनी साँसों पर अपना अधिकार चाहते हैं और ^रोटी* के फर्क़ को मिटाना चाहते हैं। वे बताना चाहते हैं कि फर्क़ तो दृ-टि और चेतना में है। इसे बदल लो फिर हम तक पहुँचने में कहीं कोई बाधा न होगी। सदियों के संताप से हम भी मुक्त होंगे और कूपमंडूकता से तुम भी। इसलिए कवि आगे कहता है :

^^यदि, तुम्हें पहुँचना है
इस महक तक
अपने कापुरु-ा से कहो
भय छोड़कर बाहर आए
जैसे छत पर आती है धूप।*

कवि इन पंक्तियों में जिस भय की बात करता है, वह गोली और बन्दूक का भय नहीं है। वह ^वर्णच्युत* होने का भय है। बिना कर्म मिली शक्तियों के छिन जाने का भय है। वर्ण श्रेष्ठता से प्राप्त भौतिक सुखों के छिन जाने का भय भी है। श्रे-ठता के दंभ ने इसे छाती से चिपकाए रखना ही तो सिखाया है। कवि ललकारता है कि आओ, धूप की तरह आओ, सिर्फ छत पर नहीं, जीवन में भी। हम तुम्हें स्वीकार करेंगे। यदि ऐसा नहीं करोगे तो एक दिन तुम्हारी ही घृणा तुम्हें मार डालेगी। क्योंकि :

घृणा तुम्हें मार सकती है
तोड़ सकती है
पर अपने ही दायरे में
जिन्दा नहीं रख सकती
ताजा हवा देकर
और, नहीं सुना सकती
प्रेम कविता
मौसम के रंगीन पंखों पर बैठाकर।

इसलिए बदलो, क्योंकि तुम्हारे बदलने से तुम्हारा भी जीवन सुन्दर होगा।

### 2.5.2 ^सच यही है* का पाठावलोकन

महत्वपूर्ण दलित रचनाकार मोहनदास नैमिशराय की प्रस्तुत कविता साम्प्रदायिकता की समस्या को पाठकों के समक्ष रखती है। कोई पूछ सकता है कि ^साम्प्रदायिकता* पर केन्द्रित कविता इस पाठ्यक्रम में क्यों? इसका सीधा सा उत्तर है कि साम्प्रदायिकता उसी समाज का भयावह रोग है, जिस समाज का हिस्सा दलित भी हैं। इसके अतिरिक्त यह भी महत्वपूर्ण है कि साम्प्रदायिकता को एक दलित कवि किस प्रकार देखता है? यहाँ बताने की आवश्यकता नहीं है कि साम्प्रदायिक दंगों के सर्वाधिक शिकार स्त्री और दलित ही होते हैं। दंगाइयों की पहुँच इन तक आसान होती है। मोहनदास नैमिशराय की यह कविता आरंभ ही होती है अन्तर्मन की सच्चाइयों के उद्घाटन से। कवि उस सच को सामने लाता है, जिसे अक्सर लोग छिपाते हैं :

सच यही है
मंदिर में आरती गाते हुए भी
नजदीक की

मस्जिद तोड़ने की लालसा
हमारे भीतर जागती रहती है
और मस्जिद में नमाज पढ़ते हुए भी
पास के मंदिर के बारे में भी
नागफनी की तरह
वैसी ही हलचल उगती है।

जाहिर है कि ऐसे भाव समाज को बाँटते हैं। कवि इस बँटने-बाँटने को रोकना चाहता है। वह जानता है कि विकास वि-ावमन से नहीं, सद्भाव से होगा। वह सद्भाव के झूठे आयोजनों पर प्रश्नचिन्ह सा खड़ा करते हुए व्यंग्य करता है :

पहले साम्प्रदायिक दंगे कराओ
फिर शांति मार्च के ढेर सारे आयोजन
सच यही है
कब्रों पर फूल उगाने जैसा
सच की कल्पना
कितनी कड़वी होती है
और वीभत्स भी
एक सच जो पहले से तैयार होता है।

कवि यहीं नहीं रुकता वह दूसरे सच को भी सामने लाता है:

दूसरा सच
बाद में बनाया जाता है।
जैसे पहले कब्र बनाना-
फिर उस पर फूल उगाना
सच यही है।

लेकिन इसके आगे का सच बहुत मार्मिक है। यह विडम्बना ही कही जाएगी कि यह मार्मिक सच दंगाई कभी नहीं देख पाते:

घर के एक सुनसान कोने में
लुटी पिटी सी
कच्ची जमीन पर पसरी
एक अदद औरत
गुमसुम सी, अपने में खोई हुई
घर से गए
अपने आदमी के लौटने की
मीठी कल्पना सीने से लगाए
दरवाजे की ओर आँखे बिछाए
पिछले एक दिन और एक रात से
इंतजार कर रही है।
सच यही है।

कई बार यह प्रतीक्षा खत्म ही नहीं होती। आखिर /mर कर कौन वापस आता है।* लेकिन मारने वालों की आँखें नहीं पसीजतीं। यहाँ एक और बात की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक है कि उद्धृत पंक्तियों में इन्तजार कर रही स्त्री /kच्ची जमीन पर पसरी है।* इस पंक्ति के निहितार्थ बहुत गहरे हैं। यह पंक्ति उस स्त्री के वर्ग के साथ ही उसके जीवन को भी रेखांकित करती है। वह अमीर वर्ग की स्त्री नहीं है। बहुत संभव है कि वह दलित हो। वह

स्त्री भीतर तक सन्नाटे से भर गई है और बाहर प्रशासन सुरक्षा के नाटक करता है। सुरक्षा का ये ढोंग भी /उसकी छाती को रौंदते हैं जैसे।* वह बार-बार इस सच से मुँह फेरना चाहती है कि उसका पति मारा जा चुका है लेकिन सच तो यही है। विडम्बना तो यह कि बड़े-बड़े दावे करने के बावजूद पुलिस उस आदमी के हत्यारे को पकड़ने में सफल नहीं होगी। कवि जोर देकर कहता है कि वह हत्यारा हम सबमें कहीं न कहीं बैठा है। कविता जिस भयावह सच को उजागर कर रही है, उसे देखें :

हम आदमी भी हैं
और हत्यारे भी।
पहले लाशें बिछाते हैं
फिर राजनीति करते हैं
क्योंकि लाशें बिछाना
और लाशों की राजनीति करना
दोनों ही हमारी नियति बन चुकी हैं।
सच यही है।

एक सभ्य और आधुनिक समाज में होना तो यह चाहिए कि हम एक दूसरे का दुःख बाँटे। एक दूसरे के कठिन समय में काम आएं लेकिन हो इसके विपरीत रहा है। श्री नैमिशराय अपनी कविता में यह रेखांकित करते हैं कि मिलना तो रोजगार चाहिए लेकिन किशोर और युवा हाथों को त्रिशूल, चाकू, कट्टे और बम बिना माँगे ही मिल रहे हैं। ऐसे में संस्कृति, परंपरा और रिश्ते सब पीछे छूट जाते हैं। बचा रहता है सिर्फ अमानु-ाभाव। और यह अमानु-ाभाव पूरी मनु-यता को डँस लेता है। दुःखद तो यह है कि कौम की खिदमत के नाम पर जो कुछ होता है, वह कब्रों पर फूल खिलाने से अधिक कुछ नहीं होता। जिनका जीवन उजड़ जाता है, कब्रों पर खिले फूल उनके जीवन में सुगन्ध नहीं भर पाते। नैमिशराय अपनी कविता की अंतिम पंक्तियों में अपनी बात उनके मन को झकझोर सके जो लोग इस तरह के कृत्य में शामिल हैं।

ßघर घर में सूनी आँखों से
एक–एक औरत
घर से बाहर गए
अपने-अपने आदमी के
लौटने का इंतजार करती है,
सच यही है
वे कतरा–कतरा होकर
जीती हैं
और कतरा–कतरा होकर
मरती हैं।*

## 2.6 संवेदनात्मक उद्देश्य

आपने ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता /घृणा तुम्हें मार सकती है* और मोहनदास नैमिशराय की कविता /सच यही है* का पाठावलोकन किया। इस पाठावलोकन में आपने निर्धारित कविताओं का गहन अध्ययन किया। प्रत्येक पंक्ति से गुजरे। इस पाठावलोकन में आपने देखा कि ये दोनों ही कविताएं भारतीय समाज की समीक्षा करती हैं। श्री वाल्मीकि की कविता जहाँ जाति व्यवस्था की निरर्थकता को साबित करते हुए उस पर चोट करती है, वहीं श्री नैमिशराय की कविता साम्प्रदायिकता का सच सामने लाती है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की यह कविता अपने पाठकों में वर्ण व्यवस्था के प्रति सार्थक घृणा पैदा करती

है और यही इसका संवेदनात्मक उद्देश्य भी है। इसी प्रकार मोहनदास नैमिशराय की कविता साम्प्रदायिकता की विभीनिका को दिखाकर हमें आगाह करती है। यह कविता बताती है कि ऐसे कामों से किसी को कुछ नहीं मिलता बल्कि बहुतों का सब कुछ लुट जाता है और फिर उन्हें कभी वापस नहीं मिलता है। हमें सद्भाव के माध्यम से भारतीय समाज को जोड़ने की कोशिश करनी चाहिए, न कि हिंसा और मतभेदों के आधार पर तोड़ने की। यही इन कविताओं का संवेदनात्मक उद्देश्य है, जिसे आपने समझा भी होगा।

## 2.7 संरचनात्मक सौन्दर्य

अध्ययन के लिए निर्धारित दोनों कविताएं आप पढ़ चुके हैं। आप उनके पाठावलोकन से गुजरते हुए उनके संवेदनात्मक उद्देश्यों को जान चुके हैं। कविताओं के पाठावलोकन के समय आपके मन में उनके शिल्प, उनकी भा-ा या कुल मिलाकर उनके संरचनात्मक सौन्दर्य के प्रति जिज्ञासा अवश्य उत्पन्न हुई होगी। यह स्वाभाविक भी है। ओमप्रकाश वाल्मीकि और मोहनदास नैमिशराय – दोनों की कविताएं छन्द मुक्त हैं। लेकिन एक भीतरी लयात्मकता दोनों ही कविताओं में उपस्थित है। ये कविताएँ निरा गद्य नहीं हैं। इनमें कवित्व भरा हुआ है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता 'घृणा तुम्हें मार सकती है* एक गठी हुई रचना है। कथ्य के प्रति चौंकन्ना यह कवि शिल्प के प्रति भी सावधान है। न कथ्य शिल्प पर भारी है और न ही शिल्प कथ्य पर। ठीक ऐसा ही मोहनदास नैमिशराय की कविता के साथ भी है। इस कविता में 'सच यही है* की बार-बार आवृत्ति जहाँ एक ओर कथ्य को अर्थपूर्ण बनाता है, वहीं वह कवित्व को भी निखारती है । इससे कविता में एक चमक पैदा होती है। यह कविता थोड़ी लम्बी है लेकिन उसमें कहीं कोई लोच नहीं है। जैसे एक तनी हुई रस्सी हो। कहीं कोई ढील नहीं। क्योंकि जहाँ ढील होगी, वहाँ कविता बिखर जाएगी। शब्दों का चयन भी सोच-समझकर किया गया है। इन कविताओं में प्रयुक्त शब्द कथ्य को अग्रगामी बनाते हैं। कुल मिलाकर कहें तो इन कविताओं का संरचनात्मक सौन्दर्य आश्वस्ति प्रदान करता है।

## 2.8 सारांश

आपने हिन्दी की दलित कविता के दो महत्वपूर्ण हस्ताक्षरों की एक-एक कविता का अध्ययन कर लिया। आपने देखा कि दलित कवि जीवन और समाज की सबसे बेधड़क सच्चाइयों को अपना काव्य वि-ाय बनाते हैं। उनके लिए कविता मनोरंजन का साधन न होकर समाज को बदलने का हथियार है। यह अकारण नहीं है कि वाल्मीकि वर्ण व्यवस्था पर चोट करते हैं और नैमिशराय साम्प्रदायिकता पर। ये कविताएं अपने युग सत्य से मुँह नहीं फेरतीं बल्कि उनसे मुठभेड़ करती हैं। इनके पाठावलोकन और संवेदनात्मक उद्देश्य से गुजरते हुए आपने देखा कि ये कविताएं अनुभव की आँच पर पककर सामने आई हैं। इनमें स्वानुभूति का ताप है। ये कविताएं भारतीय समाज के विखण्डनवादी तत्वों को नकारती हुई एक ऐसे समाज की कल्पना पेश करती हैं जो समता के दर्शन पर चलेगा। जिसमें धर्म, जाति अथवा लिंग के आधार पर कोई श्रे-ठता निश्चित नहीं की जाएगी। जिसमें सिर्फ एक ही भाव होगा- मानु-न भाव। इसके अतिरिक्त आपने कविताओं के सरंचनात्मक पक्ष का भी अध्ययन किया और देखा कि ये कविताएं संरचना की दृ-ि से भी उत्कृ-ट रचनाएं हैं। ये सघन बनावट वाली अर्थगर्भी कविताएं हैं। निःसन्देह ये कविताएं हिन्दी की दलित कविता को समृद्ध करती हैं।